जयशंकर प्रसाद के नाटकों में गांधी वादी चेतना

माया रानी, सुपुत्री श्री विनोद कुमार, एम.ए.(हिन्दी), यू.जी.सी. नैट (हिन्दी)

गांव कैरांवाली, डाकखाना माखोसरानी, तह0 व जिला सिरसा

प्रसाद युग में भारतीय जन–जीवन संघर्ष की स्थिति से गुजरते हुए भी व्यापक दृष्टिकोण के निर्माण में संलग्न था। पाश्चात्य विचारधारा के प्रभाव स्वरूप, नवीन वैज्ञानिक शिक्षा, नारी शिक्षा तथा समानाधिकार की भावना का देश में प्रचार हो रहा था। भारतीय शिक्षित वर्ग ने अपनी अपूर्ण समन्वयात्मक शक्ति तथा बुद्धि के द्वारा सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय चेतना के उद्‌बोधन में अभिरूचि प्रकट की। गांधीजी का असहयोग आन्दोलन राजनीतिक दृष्टिकोण मय होते हुए भी सांस्कृतिक, भौतिक तथा आध्यात्मिक चेतना से विमुख नहीं था। विश्वबंधुत्व मानव एकता तथा जाति एकता का आदर्श गांधी, रवीन्द्र, अरविन्द की वाणी में ध्वनित हो रहा था। गाँधीवादी राष्ट्रीय विचारधारा भौगोलिक सीमाओं का अतिक्रमण कर चुकी थी तथा उनकी दृष्टि में जातिभेद, रंगभेद, धर्मभेद का कोई स्थान शेष नहीं रह गया था। प्रसाद युग देश की तत्कालीन राजनीतिक गतिविधियों तथा युग पुरुष गाँधी की वर्णित शक्तियों का अविस्मरणीय काल है। समसामयिक नाटक साहित्य पर गाँधी जी की अहिंसा नीति, सत्याग्रह, हिन्दू–मुस्लिम एकता, धार्मिक समन्वय, ग्राम सुधार तथा रचनात्मक कार्यक्रम आदि प्रवृत्तियों का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में अत्यधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। स्वतंत्रता आन्दोलन में मजदूर तथा कृषक वर्गों में व्यापक चेतना का स्फुरण हुआ। वे विषय आर्थिक व्यवस्था के विरुद्ध चेतनन्य हो गए तथा अपने अधिकारों की माँग करने लगे। इस सक्रिय योजनाओं के परिणामस्वरूप राष्ट्रीय आन्दोलन जनव्यापी हो गया था।

परतंत्र देश की विषम परिस्थितियों में मनोरंजन, उन्नयन तथा युगानुरूप राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक समस्याओं का चित्रण और समाधान प्रस्तुत करने में प्रसाद युगीन नाटक साहित्य का अमूल्य योगदान रहा है। गाँधी जी ने सिद्धान्त रूप में जिन विचारों को अभिव्यक्ति दी है, उन्हीं के नाटकों में गाँधी विचारधारा के अनुरूप मानव जीवन में आत्मसात् करने का प्रयास किया गया है। गाँधी जी के समस्त सिद्धान्तों का निचोड़ ग्राम सुधार, जातिभेद, अछूतोद्धार आदि समस्याओं के समाधान में परिलक्षित होता है। प्रसाद युगीन नाटकों में गाँधी विचारधारा की सर्वांगीण रूप में हृदयगम करने की प्रवृत्ति मिलती है। वस्तुतः प्रसाद युग हिन्दी नाटकों के इतिहास में उत्थान या स्वर्णयुग है। इसी युग में प्रसाद ने भारती के मन्दिर में दिव्य भेंट चढाई। नाटकों का स्वरूप साहित्यिक, कलापूर्ण, स्वाभाविक, मौलिक और स्वाधीन रूप देने का

श्रेय सर्वप्रथम प्रसाद की प्रतिभा को है। प्रसाद युग में हिन्दी नाटक कला, शैली, टैक्नीक आदि की दृष्टि से पूर्ण विकास को पहुँचा।[1]

इस युग के पौराणिक, ऐतिहासिक, राष्ट्रीय तथा समस्या नाटकों पर अधिकांश रूप से गाँधी युगीन परिस्थितियों तथा विचारधारा का प्रभाव दिखाई देता है। गाँधीवादी राजनीतिक चेतना के परिणामस्वरूप देशभक्ति तथा भारत के भव्य अतीत का ज्ञान, जागृति संदेश, भारतीय गौरव की रक्षा आदि विषयों को लेकर नाटक प्रणीत किये जाने लगे। इन नाटकों में युगानुरूप हिन्दू–मुस्लिम एकता समस्या सर्वोपरि थी। ये नाटककार राजनीतिक चेतना के अतिरिक्त सांस्कृतिक उत्थान की दिशा में भी प्रयत्नशील थे। इस प्रकार परोक्षरूप में महात्मा गाँधी की विचारधारा से प्रभावित राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक पुनरूत्थान की चेतना से युक्त नाटक साहित्य का विकास आरंभ हो चुका था।

प्रसाद के नाटकों में गाँधीवादी चेतना

प्रसाद के प्रयोगकालीन नाटक (सज्जन, 1910–11, कल्याणी, परिणय 1912, करूणालय 1912) ऐतिहासिक अन्वेषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण कहे जा सकते हैं। उनमें गाँधीवादी राष्ट्रीय चेतना का पुष्ट स्वरूप नहीं दिखाई देता।

राज्यश्री (1915)

'राज्यश्री' नाटक में प्रसाद ने लोक सेवा को ही राष्ट्रसेवा कहा है। उन्होंने राष्ट्रीयता का सच्चा आदर्श राज्यश्री के मुख से व्यक्त कराया है, ''भाई ! यहाँ त्याग का प्रश्न नहीं है, यह लोक सेवा है। ऐसा राज्य करने का आदर्श आर्यव्रत की ही उत्थान भी है।[2] प्रसाद गाँधी जी से प्रभावित होने के कारण राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्ति के उग्र साधनों को हिंसा मानते थे। किन्तु इस सर्वतोदार पक्षीय दृष्टिकोण को अपनाते हुए भी वे आतताइयों के सन्मुख नतमस्तक होने की भी शिक्षा नहीं देते।

विशाख (1921)

नाटक के रचनाकाल में गाँधीजी का सत्याग्रह आन्दोलन देश व्यापी बन गया था। जलियां वाला बाग की नृशंस घटना घट चुकी थी। देश रोलट एक्ट, गवर्नमैंट ऑफ इंडिया एक्ट तथा प्रैस एक्ट के विरोध के लिए उत्सुक था। हिंसक तरीकों से विरोध करने के पक्ष में क्रान्तिकारी वर्ग सक्रिय हो उठा था। रोलट बिल की प्रतिक्रिया रूवरूप गाँधी जी का भारतीय राजनीति में आगमण हो चुका था। किन्नर नरदेव के अत्याचारों

[1] जयनाथ नलिन – हिन्दी नाटककार, पृ0 29

[2] राज्यश्री, पृ0 75

के रूप में प्रसाद ने विदेशी सत्ता के अमानुषिक अत्याचारों का उल्लेख किया है। प्रसाद के प्रेमानन्द गाँधी जी के प्रतिरूप हैं। उनका व्यक्तित्व नाटक को युगीन चेना से संपृक्त करता है। तत्कालीन जीवन पशुवत् और मरण से भी निकृष्ट हो गया था। न्याय व्यवस्था पक्षपातपूर्ण थी। विशाख बन्दी रूप में न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने पर न्यायिक पद्धति पर व्यंग्य करता है – ''मैं नहीं जानत कि उस समय क्या उत्तर दिया जाता है, जबकि अभियोग ही उल्टा हो और जो अभियुक्त हो वही न्यायाधीश हो।[3]

अजातशत्रु (1922)

अजातशत्रु नाटक का संघर्ष राजकीय है। इस नाटक में बुद्ध के जीवनकाल की समस्त राजनीतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक समस्याओं को समेट लिया गया है। नाटक में सर्वत्र क्रान्ति का विकट योग ध्वनित होता है। यह विरोध निम्न वर्गों में है :

1. राजनीतिक – राजाओं के विरुद्ध राजकुमारों की क्रान्ति।
2. सामाजिक – आभिजान वर्ग के विरुद्ध निम्न वर्ग की क्रान्ति।
3. धार्मिक – रूढ़िवाद के विरुद्ध सुधारवाद की क्रान्ति।
4. कौटम्बिक – पुरुषों के विरुद्ध स्त्रियों की क्रान्ति।

प्रसादयुग में विदेशी शासन के अत्याचारों के विरोध में जनसाधारण क्रान्तिकारी हिंसा हथकण्डे अपनाने के पक्ष में था। उधर शासन भी दमन के लिए कटिबद्ध था। ऐसी विषम स्थिति में महात्मा गाँधी ने अहिंसक राष्ट्रीय संग्राम का आह्वान किया। राज्य–क्रान्ति का समाधान मल्लिका के शब्दों में – '' क्षमा से बढ़कर दण्ड नहीं है और आपकी राजनीतिक उसी का उपहास न करे।[4]

प्रसाद ने वर्तमान राजनीति को गाँधी विचारधारा से प्रभावित होकर सदैव क्षमा तथा निष्पक्ष न्याय का आधार ग्रहण करने का सर्वत्र परामर्श दिया है। उन्होंने परम्परागत राजतंत्रीय पद्धति के विरोध में नवीन स्वरों का उद्घोष किया है – ''क्षमा पुरानी और नियंत्रण में बंधी हुई संसार के कीचड़ में निमग्नित राजतंत्र की पद्धति नवीन उद्योग को असफल कर देगी।''[5]

प्रसाद राष्ट्र को सदैव समृद्ध देखने के अभिलाषी रहे हैं। उनका विश्वास था कि ''मगध का राष्ट्र सदैव गर्व से उन्नत रहेगा तथा विरोधी शक्ति पद दलित होगी।''[6] यही धारणा स्वराज्य के प्रति महात्मा गाँधी की थी कि देश अवश्य स्वतन्त्र होकर अपने प्राचीन गौरव को पुनः प्राप्त करेगा। प्रसाद के विचार में

[3] विशाख पृ0 64

[4] अजातशत्रु पृ0 123

[5] अजातशत्रु पृ0 61

[6] अजातशत्रु पृ0 62

राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का राष्ट्र की उन्नति हेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए क्योंकि राष्ट्र का उद्धार करना भी भारी परोपकार है।''[7]

तत्कालीन प्राणोत्सर्ग की अदम्य भावना के वीरता व्यंजक स्वरों की अभिव्यक्ति से नाटक परिपूर्ण है –''वीर हृदय युद्ध का नाम सुनकर नाच उठता है, शक्तिशाली मुकदण्ड फड़कने लगते हैं।''[8] प्रसाद के सन्मुख भारतीय वीर तलवार की धार हैं, अग्नि की भयानक ज्वाला हैं और वीरता के परिचय दूत हैं।''[9] ऐसा प्रतीत होता है कि गाँधी जी की अहिंसात्मक लड़ाई पर से जनता का विश्वास हिलने लगा था तथा भारतीय राष्ट्रीयता संग्राम में उग्र क्रान्तिकारियों का प्रभाव पड़ने लगा था। प्रसाद के उपरोक्त कथन में क्रान्ति की लपटें उठती दिखाई देती हैं। वीर प्रशस्ति के ऐसे अनेक उद्‌गार प्रसाद के नाटकों में द्रष्टव्य हैं।

''राष्ट्र के कल्याण के लिए प्राण विसर्जन किया जा सकता है और हम सब ऐसी प्रतिज्ञा करते हैं।''[10] राष्ट्र की रक्षा में यदि प्राण भी विसर्जित हो जाते हैं, तो यह गौरवपूर्ण है। प्रसाद ने जनतंत्र के समर्थन में राजतंत्र की निरंकुश प्रणाली का भी विरोध किया है।[11]

कामना (1923–24)

कामना नाटक की रचना का समय भारत में गाँधी जी के नेतृत्व में नवजागरण का युग था। जिसमें धनी व्यक्ति ऐश्वर्य से विरक्त होकर स्वतंत्रता के कर्मठ सेनानी बन रहे थे। सबके हृदय में यही कामना थी कि हम स्वतंत्र हों तथा विदेशी बन्धन से मुक्त होकर स्वाभाविक जीवन बिताएं। इस नाटक की रचना का उद्‌देश्य पाश्चात्य शासन प्रणाली के अत्याचारों का उद्‌घाटन करना है। कामना के शब्दों में ''मेरी प्रजा इस बर्बरता से जितनी शीघ्र छुट्‌टी पाए उतना अच्छा।''[12] गाँधी जी हिन्दू–मुस्लिमों को संगठित कर विदेशी शक्ति से संयुक्त मोर्चा लेना चाहते थे। उन्होंने साम्प्रदायिकता का विरोध कर सबको एक ही राष्ट्रीय पताका की छाया में स्वतंत्रता संग्राम के लिए नियन्त्रित किया। गाँधी जी का प्रतिरूप विवेक कहता है – ''हम लोगों को भाई समझकर मित्र भाव की स्थापना करो और उनके अत्याचारों से रक्षा करो। हम परस्पर एक–दूसरे के सहायक हों।[13] यहां प्रसाद का तात्पर्य हिन्दू–मुस्लिम भ्रातृ भाव स्थापित करके संगठित रूप से अत्याचारी शासन का विरोध करने से है।

---

[7] अजातशत्रु पृ0 63

[8] अजातशत्रु पृ0 71

[9] अजातशत्रु पृ0 72

[10] अजातशत्रु पृ0 63

[11] अजातशत्रु पृ0 61

[12] अजातशत्रु पृ0 97

[13] कामना, पृ0 92

जनमेयजय का नागयज्ञ (1926)

जनमेयजय का नागयज्ञ नाटक के पौराणिक कथानक को प्रसाद ने युगीन प्रश्नों – स्वतंत्रता संग्राम, नारी स्वातंत्र्य तथा जातीय गौरव से संबद्ध करके राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया है। परतन्त्र भारतीयों के लिए यह उक्ति उत्तेजना पूर्ण है – '' नाग मरना जानते हैं, भी वे परिचयहीन नहीं हुए हैं। जिस दिन वे मरने से डरने लगेंगे, उसी दिन उनका नाश होगा। जो जाति मरना जानती रहेगी उसी को इस पृथ्वी पर जीने का अधिकार रहेगा।''[14] कायरता को मिटाने वाले ये कथन जाति प्रेम तथा देश प्रेम की भावना को उकसाने में पूर्ण सक्षम हैं। प्रसाद ने तत्कालीन शासक तथा शासित वर्ग के प्रति सौमनस्य की भावना जागृत करने का प्रयास किया है – '' जब राजा अपनी प्रजा का, अपने राष्ट्र का वैभव कर रहा हो, तब उसका आदर करना भी उसकी प्रजा का धर्म है।''[15] यह गाँधी विचारधारा के परिणामस्वरूप है।

अंग्रेजी राज्य की सेवा में नियुक्त हिन्दू अधिकारी (नौकरशाही) वर्ग के प्रति प्रसादा ने तीव्र व्यंग्य किया है – ''राज्य सम्पर्क हो जाने से वही हड्डी माँस के मनुष्य अपने को किसी बड़े प्रयोजन की वस्तु समझने लगते हैं। उन्हें विश्वास हो जाता है कि हम किसी दूसरे जगत् के हैं।''[16]

प्रसाद ने अश्वमेघ यज्ञ तथा ऐन्द्रमहाभिषेक की प्रथा के उल्लेख द्वारा राष्ट्रौत्थान तथा जातीय गौरव की स्थापना की है। पराधीन नाग जाति के विद्रोहास्पद विचारों के माध्यम से प्रसाद ने समसामयिक जनवाणी को सम्यक् अभिव्यक्ति दी है।

प्रसाद के उत्कर्षकालीन नाटक स्कन्दगुप्त (1928), चन्द्रगुप्त (1929) तथा ध्रुवस्वामिनी (1966) उनकी साहित्यिक कीर्ति के अमर स्तम्भ हैं। इन नाटकों के वस्तु विकास की परिस्थितियों में हमारे युग का समूचा परिवेश प्रतिध्वनित है – ''एक पक्ष भारतीय राजनीति के तत्कालिक आन्दोलनों में और दूसरा पक्ष वैयक्तिक धरातल या परिपार्श्व में देखा जा सकता है।''[17]

स्कन्दगुप्त (1928) नाटक के रचनाकाल में भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम चरमोत्कर्ष पर था। गाँधीवादी भावना का स्वर क्रान्ति में परिवर्तित हो गया था तथा राष्ट्रीयता की भावना व्यापक रूप धारण कर चुकी थी । पराधीन देश के प्रत्येक स्वाभिमानी व्यक्ति के वैयक्तिक धरातल पर स्कन्दगुप्त सोचता है – आर्य समाज का नाश इन्हीं आँखों को देखना था। हृदय काँप उठता है, देशाभिमान गरजने लगता है। सच्चा राष्ट्रप्रेमी किसी उच्च पद का अभिलाषी नहीं होता है। ''मेरा स्वत्व न हो, मुझे अधिकार की आवश्यकता नहीं। यह नीति और सदाचारी का महान वाक्य वृक्ष गुप्त साम्राज्य हरा भरा रहे और कोई भी उसका उपयुक्त रक्षक

[14] जनमेयजय का नागयज्ञ, पृ0 66

[15] जनमेयजय का नागयज्ञ, पृ0 19

[16] जनमेयजय का नागयज्ञ, पृ0 45

[17] डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल – प्रसादयुगीन हिन्दी नाटक, पृ0 70

हो।''[18] यह निस्वार्थ देश सेवा का अनुपम उदाहरण है। स्कन्द गुप्त का राष्ट्रीय आदर्श दूसरों के स्वत्व के अपहरण तथा परपीडन से विमुख है। गाँधी जी की तरह प्रसाद की धारणा है कि राष्ट्र की सुरक्षा तथा उत्थान के लिए युद्ध आवश्यक है, किन्तु वह आक्रामक नहीं होना चाहिए। जन्मभूमि के उद्धार के स्वर 'स्कन्द गुप्त' में इतनी तीव्रता से ध्वनित हो रहे हैं कि उनमें गाँधीयुगीन समूचे राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास तथा युगीन चेतना के सर्वांगीण रूप के दर्शन होते हैं।

स्कन्दगुप्त का समस्त आयोजन, क्रिया प्रणाली, विपुल संघर्ष उसे एक कर्मठ निस्पृश राष्ट्रीय सेवक सिद्ध करते हैं। वह मानव में मूर्धा भिविक्त होने पर राष्ट्र के सुरक्षात्मक दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करता है – ''गुरूवर उत्तरदायित्व का सत्य से पालन कर सकूं, आप लोग इसके लिए भगवान से प्रार्थना कीजिए और आशीर्वाद दीजिए कि स्कन्दगुप्त अपने कर्त्तव्य से, स्वदेश सेवा से कभी विचलित न हो।[19]

चन्द्रगुप्त (1939)

चन्द्रगुप्त नाटक की रचना द्वारा प्रसाद ने तत्कालीन जातीयता, प्रान्तीयता तथा वैयक्तिक भेदभावों का उन्मुलन कर व्यापक राष्ट्रीय चेतना का आह्वान किया है। उत्कट देश प्रेम के कारण ही प्रसाद ने स्वदेश के गौरवपूर्ण प्राचीन इतिहास का उद्घाटन अपना एकमात्र लक्ष्य बना लिया था।[20]

'चन्द्रगुप्त' नाटक में प्रसाद ने जीवन को जन्मभूमि के हितार्थ अर्पित करने का संदेश दिया है। विवरण कहता है –

''जन्मभूमि के लिए ही जीवन है।''[21]

''प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए जो लड़कर मर नहीं गया वह कायर नहीं तो और क्या है।''[22]

राष्ट्रीय उद्बोधन भी अलका द्वारा गाए हुए गीत में मिलता है :

हिमाद्रि शुंग शुंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा मनुष्यता स्वतंत्रता पुकारती।''[23]

नवयुग में राष्ट्रीय चेतना भरने के लिए अलका का यह उद्बोधन गीत बहुत ही उपयुक्त है। नारी ने भी ग्रह क्षेत्र तक सीमित न रहकर राजनीति में भाग लेना आरंभ कर दिया था। विद्रोहिणी अलका को राष्ट्रीय जागरण ही अभिप्रेत है –

---

[18] स्कन्दगुप्त, पृ0 128

[19] स्कन्दगुप्त, पृ0 82

[20] ब्रजरत्नदास – हिन्दी नाटक साहित्य, पृ0 336

[21] चन्द्रगुप्त, पृ0 79

[22] चन्द्रगुप्त, पृ0 28

[23] चन्द्रगुप्त, पृ0 177

''मैं मुक्त होने पर यही करूंगी। कुल पुत्रों के रक्त से आर्यावर्त्त की भूमि दिखेगी। मानवी बनकर जननी जन्मभूमि अपनी संतान को लाएगी। आर्यावर्त्त के सभी बच्चे गाँधी जैसे नहीं होंगे। मैं इसकी मान प्रतिष्ठा और रक्षा के लिए तिल तिल कट जाएंगे। स्मरण रहे, यवनो की विजय वाहिनी के आक्रमण को प्रत्यावर्तन बनाने वाले यही भारत सन्तान होंगे।[24]

प्रसाद ने चन्द्रगुप्त तथा यवन कन्या में विवाह सम्बन्ध स्थापित कराके अन्तर्राष्ट्रीय एकता तथा विश्वमैत्री की भावना को सुदृढ़ता प्रदान की है। भारतीय राष्ट्रीय चेतना का परम्परागत आधार राजतन्त्र रहा है। प्रसाद के नाटकों में राजतंत्र का चित्रण है, एक सीमा तक समर्थन भी। किन्तु उसमें तानाशाही, अत्याचार या अविचार को त्याज्य माना है। स्वेच्छाचारी शासन का परिणाम तुमने स्वयं देख लिया है, अब मंत्री–परिषद् की सम्मति से मगध और आर्यावर्त्त के कल्याण में लगी।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करने के लिए भारतीयों ने महात्मा गाँधी को लोकप्रिय नेता निर्वाचित किया था। प्रसाद ने नन्द के निरंकुश शासन के उन्मूलन के पश्चात् यवनों के आक्रमण से भारत का निरापद करने के लिए प्रजा को सेनापति के निर्वाचन का अधिकार दिया है। उन्होंने प्रजातंत्र के अन्तर्गत स्वतंत्रता की सीमा भी निर्धारित की है। उनका विचार था कि यहां एक संगत और सुनियंत्रित शासन की आवश्यकता है। 'स्कन्दगुप्त' और 'चन्द्रगुप्त' नाटक में प्रसाद ने समसामयिक जन बल तथा जनमत की वास्तविक शक्ति की पहचान कर जनता को एक महत्वपूर्ण निर्णायत तत्व स्वीकार किया है। भारत को आरंभ से ही एक स्वतंत्र गणराज्य घोषित कर उन्होंने अपने प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण का परिचय दिया है। उनका युद्ध सम्बन्धी दृष्टिकोण आक्रामक न होकर रक्षात्मक था। प्रारंभ में प्रसाद स्वराज्य प्राप्ति के शांतिपूर्ण साधनों (गाँधीवादी विचारों) अहिंसा, करूणा, क्षमा, निवेदन में विश्वास करते हुए प्रतीत होते हैं, किन्तु स्कन्दगुप्त तथा चन्द्रगुप्त तक आते–आते भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में उग्रवादी बल का प्राधान्य हो गया था, जिसका यह विश्वास था कि सशस्त्र क्रांति द्वारा ही स्वराज्य प्राप्ति संभव है। प्रसाद ने इसी दृष्टिकोण को अभिव्यक्त किया है – ''चाणक्य सिद्धि देखता है, साधन चाहे कैसे भी हों।''[25] उन्हें यह विश्वास हो चुका था कि भारतीय जीवन के समस्त दुःखों का मूल कारण विदेशी नियन्त्रण है। यदि संपूर्ण नाटकों में वर्णित राजनीतिक स्थिति को एक क्रम में रख दें तो स्पष्ट ज्ञात हो जाएगा कि किस प्रकार आर्य जाति अपने राजनीतिक उत्थान के लिए निरन्तर उद्योगशील बनी रही है।[26]

प्रसाद के नाटकों में गाँधीवादी अध्यात्म, अहिंसा, करूणा, क्षमा, मानवता, विश्वमैत्री आदि विचारधारा का प्रत्यंकन स्पष्ट रूप से मिलता है।

---

[24] चन्द्रगुप्त, पृ0 77

[25] चन्द्रगुप्त, पृ0 97

[26] पं. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा – प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन, पृ0 270

सन् 1921–22 में गाँधी वाणी द्रष्टव्य है : ''सत्य को सामने रखो, आत्म बल पर भरोसा रखो, न्याय की माँग करो।''[27] गाँधी जी पापी से नहीं पाप से घृणा करते थे – ''प्रति हिंसा पाश्यवृत्ति है, पापी से नहीं पाप से घृणा करो।''[28] वे भारतीय अध्यात्म की व्याख्या करते हैं– '' मैं शाश्वत संघ का अनुयायी हूँ। प्रेम की सत्ता को संसार भर में जगाना मेरा कर्त्तव्य है।''[29] सदकर्म ह्रदय को विशाल बनाता है और ह्रदय में उच्च वृत्तियाँ स्थान पाने लगती हैं। इसीलिए सदकर्म योग को आदर्श बनाना, आत्मा की उन्नति का मार्ग स्वच्छ और प्रशस्त करना है। क्रूरता को घृणित मानते हुए प्रेमानन्द गाँधी जी की तरह शक्ति का सदुपयोग करने का संदेश देते हैं – ''सत्ता शक्तिमानों को निर्बलों की रक्षा के लिए मिली है, डराने के लिए नहीं।''[30]

प्रसाद ने राज कर से युक्त जमींदारियों के उपयोगी महत्तों और भिक्षुओं को तिरस्कृत माना है। वे गाँधी जी की तरह समानता की भावना के पोषक थे। गाँधी प्रभाव के कारण नरदेव सदृश्य व्यक्ति में नैतिक गुणों का संचार होता है। गाँधी जी की तरह विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान प्रसाद जी करूणा, अहिंसा, विश्वमैत्री में सोचते हैं :

''मानवी सृष्टि करूणा के लिए है, यों तो क्रूरता निदर्शन हिसंक पशु जगत में क्या कम हैं।''[31] (करूणा)

''मनुष्य होना राजा होने से अच्छा है।''[32] (मानवतावाद)

''वाक् संयम विश्वमैत्री की पहली सीढ़ी है।''[33] (विश्वमैत्री)

''स्वर्ण और रत्नों का आँखों पर बड़ा रंग रहता है, जिसमें मनुष्य अपना अस्थि चर्म का शरीर तक नहीं देखने पाता है।''[34] (भौतिकता का विरोध)

प्रसाद ने राजनीति में क्षमा तथा न्याय का आधार ग्रहण करने का परामर्श भी दिया है।[35]

तत्कालीन कर बोझ से जनता त्रस्त थी। गाँधी जी ने कर न देने की नीति को प्रसाद ने अभिव्यक्त किया है –

---

[27] विशाख, पृ0 77

[28] विशाख, पृ0 9

[29] विशाख, पृ0 30

[30] विशाख, पृ0 41

[31] कथावस्तु, पृ0 24

[32] कथावस्तु, पृ0 24

[33] कथावस्तु, पृ0 30

[34] कथावस्तु, पृ0 36

[35] कथावस्तु, पृ0 123

हम लोग उस अत्याचारी राजा को कर न देंगे, जो अधर्म के बल से पिता के जीते जी ही सिंहासन छीन कर बैठ गया है और जो पीड़ित प्रजा की रक्षा भी नहीं कर सकता।[36]

जमींदारी प्रथा के प्रचलन से आर्थिक शोषण की प्रक्रिया भीषण हो गई थी। जाति, ऊँच–नीच का भेदभाव जनता के मानस में बिंध गया था। भौतिकता के समर्थक तथा विभाजन के इच्छुक व्यक्तियों को प्रसाद ने राष्ट्रद्रोही तथा राष्ट्र में भेदभाव फैलाने का अपराधी कहा है।[37]

प्राचीन अन्ध विश्वासों तथा उच्च निम्न वर्ग भेद की प्रथा का खण्डन किया है। यह दम्भ तुम्हारा प्राचीन संस्कार है। यह छोटे–बड़े का भेद क्या इस संकीर्ण हृदय में इस तरह घुसा है कि निकल नहीं सकता। क्या जीवन की वर्तमान स्थिति देखकर प्राचीन अन्ध विश्वासों को जो न जाने किस कारण होते आए हैं, तुम बदलने के लिए प्रस्तुत नहीं हो।[38]

गाँधी जी की सविनय अवज्ञा को भी प्रसाद ने प्रस्तुत किया है – ''जिस राष्ट्र और समाज से हमारी सुख–शान्ति में बाधा पड़ती हो, उसका हमें तिरस्कार करना ही होगा।''[39]

'कामना' नाटक में गाँधी जी के आधि–भौतिकता विरोधी विचारों से प्रभावित होकर प्रसाद ने समुद्र पार की यांत्रिक सभ्यता का विध्वंस दिखाकर आधुनिक जीवन की अति यांत्रिकता के प्रति अपना विरोध प्रकट किया है। गाँधीजी आधुनिक पाश्चात्य भौतिक सभ्यता के जिस कृत्रिम जीवन से मानव जाति को सचेत कर रहे थे वह प्रसाद जी को भी अप्रिय था। जीवन के समस्त प्रश्नों के मूल में अर्थ की प्रधानता होने के कारण मानव इतना लोलुप हो गया कि हिंसा तथा रक्तपात को एक साधारण कृत्य समझता है। गाँधीजी का प्रतिरूप विवेक युवकों से कहता है –

हम लोगों को भाई समझकर मित्र भाव की स्थापना करो और इनके अत्याचारों से रक्षा करो। हम परस्पर एक–दूसरे के सहायक हों।''[40] गाँधीजी जिस हिन्दू–मुस्लिम संगठन के लिए उद्यमशील थे, प्रसाद का भी तात्पर्य यहां हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित करके संगठित रूप से अत्याचारी शासन का विरोध करने से है। 'कामना' नाटक में भी स्वर्ण तथा मदिरा के प्रचार को राष्ट्रीय पतन का प्रमुख कारण माना है।

निष्कर्ष

गाँधी जी ने सिद्धान्त रूप में जिन विचारों को अभिव्यक्ति दी है, उन्हीं के नाटकों में गाँधी विचारधारा के अनुरूप मानव जीवन में आत्मसात् करने का प्रयास किया गया है। गाँधी जी के समस्त सिद्धान्तों का निचोड़ ग्राम सुधार, जातिभेद, अछूतोद्धार आदि समस्याओं के समाधान में परिलक्षित होता है।

[36] कथावस्तु, पृ0 59

[37] कथावस्तु, पृ0 33

[38] कथावस्तु, पृ0 125

[39] कथावस्तु, पृ0 129

[40] कामना, पृ0 92

प्रसाद युगीन नाटकों में गाँधी विचारधारा की सर्वांगीण रूप में हृदयगम करने की प्रवृत्ति मिलती है। गाँधीजी आधुनिक पाश्चात्य भौतिक सभ्यता के जिस कृत्रिम जीवन से मानव जाति को सचेत कर रहे थे वह प्रसाद जी को भी अप्रिय था। जीवन के समस्त प्रश्नों के मूल में अर्थ की प्रधानता होने के कारण मानव इतना लोलुप हो गया कि हिंसा तथा रक्तपात को एक साधारण कृत्य समझता है। गाँधी जी के समस्त सिद्धान्तों का निचोड़ ग्राम सुधार, जातिभेद, अछूतोद्धार आदि समस्याओं के समाधान में परिलक्षित होता है। प्रसाद युगीन नाटकों में गाँधी विचारधारा की सर्वांगीण रूप में हृदयगम करने की प्रवृत्ति मिलती है।